मगसिर शुक्ल ६, गुरुवार, दिनांक १९-१२-१९७४, श्लोक-४, प्रवचन-९

यह समाधितन्त्र, चौथी गाथा। इसकी **टीका - बहिः, अर्थात् बहिरात्मा;....** पहला शब्दार्थ करते हैं। **अंतः, अर्थात् अन्तरात्मा; और परः, अर्थात् परमात्मा—** तीन शब्द संक्षिप्त थे। बहि, अन्तः और पर। बस। **इस प्रकार त्रिधा, अर्थात् तीन प्रकार का आत्मा है। ये ( प्रकार-भेद ) किसमें हैं? सर्व देहियों में-समस्त प्राणियों में।** सब जीवों में तीन प्रकार के आत्मा हैं।

**मुमुक्षु :** तीनों काल में?

**पूज्य गुरुदेवश्री :** तीनों काल में। किस प्रकार, अब यह बात करेंगे।

**अभव्यों में बहिरात्मपना ही सम्भव होने से,....** समझ में आया? **अभव्यों में बहिरात्मपना ही सम्भव होने से,....** शिष्य का प्रश्न है। तुमने तो सबमें तीन आत्मा कहे। अभव्य में भी तीन, परमात्मा में भी तीन, अन्तरात्मा में भी तीन। आहाहा! **सर्व देहियों ( प्राणियों ) में तीन प्रकार का आत्मा है—ऐसा किस प्रकार हो सकता है?** यह शिष्य का प्रश्न है।

**ऐसा कहना भी योग्य नहीं,....** तेरी यह बात उचित नहीं है। **क्योंकि वहाँ भी ( अभव्य में भी ) द्रव्यरूपपने से, तीनों प्रकार के आत्मा का सद्भाव घटित होता है।** द्रव्यरूपपने से। उसका जो द्रव्य है न अभव्य का, वह तो मात्र केवलज्ञानमय परमात्मस्वरूप है। समझ में आया? **द्रव्यरूपपने से, तीनों प्रकार के आत्मा का सद्भाव घटित होता है।** देखो! यह न्याय दिया। यह प्रश्न (संवत्) १९८५ में बड़ा हुआ था। कहा न वहाँ, वढवाण। मोहनलालजी थे न? लींबड़ी संघाणा के। मोहनलाल। वे कहे कि अभव्य को तीन ही आवरण होते हैं—मति आवरण, श्रुत आवरण और अवधि आवरण। बस। मनःपर्यय और केवलज्ञान (आवरण) नहीं होता। क्योंकि वह प्रगट नहीं होते, इसलिए नहीं होता। यह प्रश्न ८५ में हुआ था।

कहा, बात खोटी है। अभव्य को भी पाँच आवरण हैं। मतिज्ञानावरण, श्रुतज्ञानावरण, अवधिज्ञानावरण, मनःपर्ययज्ञानावरण, केवलज्ञानावरण है। केवलज्ञानावरण है, केवलज्ञान

है तो केवलज्ञानावरण है। अन्दर केवलज्ञान शक्ति है। अभव्य को भी शक्ति है। समझ में आया? यह बात इन्होंने ली है। यहाँ सुनी थी न सब इसने। यह समाधितन्त्र यहाँ सुन गये हैं, यह छोटाभाई। उसमें से लिखा है।

**वहाँ पाँच ज्ञानावरण ( कर्मों ) की उपपत्ति किस प्रकार घट सकती है? केवलज्ञानादि के प्रगट होनेरूप सामग्री ही उसके होती नहीं है,...** अभव्य को। समझ में आया? **वहाँ पाँच ज्ञानावरण ( कर्मों ) की उपपत्ति किस प्रकार घट सकती है? केवलज्ञानादि के प्रगट होनेरूप सामग्री ही उसके होती नहीं है, इस कारण उसमें अभव्यपना है; न कि तद्योग्य द्रव्य के अभाव से ( अभव्यपना है )....** क्या कहा यह, समझ में आया? पाँच आवरण की वस्तु है। नहीं तो पाँच आवरण सिद्ध नहीं हो सकेंगे। अन्दर शक्ति केवलज्ञान की, मन:पर्यय की सब है। आहाहा!

**केवलज्ञानादि के प्रगट होनेरूप सामग्री ही उसके होती नहीं है, इस कारण उसमें अभव्यपना है; न कि तद्योग्य द्रव्य के अभाव से ( अभव्यपना है ) अथवा भव्यराशि की अपेक्षा से सर्व देहियों का ग्रहण समझना।** तद्योग्य द्रव्य का अभाव अर्थात् अभव्यपना है—उसका-द्रव्य का अभाव होकर अभव्यपना है, ऐसा नहीं है। द्रव्यपना तो बराबर है। समझ में आया? **अथवा भव्यराशि की अपेक्षा से सर्व देहियों का ग्रहण समझना। आसन्न भव्य, दूर भव्य, दूरतर भव्य तथा अभव्य जैसे भव्यों में-सर्व में तीन प्रकार का आत्मा है।** यहाँ तो कहते हैं, तीनों प्रकार का सबमें आत्मा है। आहाहा! स्वयं दृष्टान्त दिया है। तब कहा था। 'सर्व जीव है सिद्धसम।' आता है न दृष्टान्त? सब जीव सिद्ध जैसे हैं। अभव्य भी सिद्ध जैसे हैं। यह तो प्रगट करने की पर्याय में योग्यता नहीं। समझ में आया? आहाहा!

द्रव्यस्वभाव का सत्त्वपना तो केवलज्ञानमय है। आहाहा! उसे केवलज्ञानावरणीय का निमित्त आवरण कहने में आता है। केवलज्ञानावरणीय न हो, तब तो केवलज्ञान नहीं होगा। केवलज्ञानावरणीय है तो उसका अर्थ क्या हुआ? कि शक्ति स्वभाव केवल एक का ज्ञान पूर्ण होने के योग्य है, ऐसा उसका स्वभाव है। समझ में आया? **सर्व में तीन प्रकार का आत्मा है।**

अब कहते हैं, **तो सर्वज्ञ में परमात्मा का ही सद्भाव होने से और ( उनमें ) बहिरात्मा तथा अन्तरात्मा का असद्भाव होने से, उसमें ( सिद्ध में ) तीन प्रकार के आत्मा का विरोध आयेगा ?** इनने निकाला वहाँ वापस। अभव्य में तो बताया, वह तो तीन प्रकार का है। उसमें केवलज्ञानावरणीय भी है, इसलिए केवलज्ञान है। आहाहा! आत्मा अर्थात् 'ज्ञ' स्वभाव और 'ज्ञ' स्वभाव अर्थात् ही पूर्ण स्वभाव। समझ में आया? आत्मा अर्थात् 'ज्ञ' स्वभाव; 'ज्ञ' स्वभाव अर्थात् सर्वज्ञस्वभाव; सर्वज्ञ स्वभाव अर्थात् पूर्ण स्वभाव। उसे यहाँ आत्मा कहते हैं। उसे अन्दर केवलज्ञान का आवरण है तो अन्दर केवलज्ञान है। परिपूर्ण सर्वज्ञ शक्ति पूरी है। अभव्य में भी सर्वज्ञ शक्ति है। लोगों को बात बैठना कठिन। वस्तु है न। पर्याय में प्रगट होने की योग्यता भले न हो परन्तु यह आत्मा है न! अभव्य का भी आत्मा है न! आहाहा! वह केवलज्ञानमय ही है, पूर्ण ज्ञानमय ही है। इसलिए उसे भी परमात्मपना घटित होता है। परमात्मा होनेयोग्य पर्याय में भले न हो, परन्तु परमात्मस्वरूप तो है। समझ में आया? ऐसे आत्मा का उसे विश्वास आना....! अभव्य को उसका विश्वास आता नहीं। वस्तु है। समझ में आया? भव्य, दूर भव्य को उसका विश्वास आता है। इसलिए अन्तरात्मा होकर परमात्मा हो सकता है। ऐसा कहा है न? देखो!

'**उपेयात्तत्र**' अन्तरात्मा वह उपाय है। बहिरात्मा को तजकर परमात्मा को प्रगट करना। है न? '**मध्योपायाद्बहिस्त्यजेत्**' आहाहा! '**उपेयात्तत्र परमं**' आहाहा! परन्तु अन्दर परम परमात्मा होने की शक्ति है तो पर्याय में परमात्मा होता है। आहाहा! यह परमात्मस्वरूप से अन्तरात्मा है। उसकी अन्तर्दृष्टि अनुभव करने से वह अन्तरात्मा होता है और वह अन्तरात्मा द्वारा, अन्तरात्मा मध्य है, उस द्वारा परमात्मा को प्रगट करना और बहिरात्मा को छोड़ना। यह बात तीनों में कही है। समझ में आया?

सर्वज्ञ में कहाँ यह लागू पड़े? कहते हैं। सर्वज्ञ में कहाँ है बहिरात्मा और अन्तरात्मा? तुमने अभव्य में तो सिद्ध किया। समझ में आया? **अन्तरात्मा का असद्भाव होने से, उसमें ( सिद्ध में ) तीन प्रकार के आत्मा का विरोध आयेगा? ऐसा कहना भी योग्य नहीं है क्योंकि भूतपूर्व प्रज्ञापननय की अपेक्षा से,... जो भूतकाल की पर्याय को**

**वर्तमानवत् कहे, उस ज्ञान ( अथवा वचन ) को भूतनैगमनय कहते हैं...** भूतकाल की अपेक्षा से परमात्मा को भी, भूतनैगम की अपेक्षा से परमात्मा को भी वर्तमान में बहिरात्मा कहा जाता है। आहाहा! समझ में आया?

**मुमुक्षु :** इसका क्या काम है? उन्हें ऐसा कहा जाता है और इसे ऐसा कहने में आता है....

**पूज्य गुरुदेवश्री :** इसका काम है। वस्तु का स्वभाव पूर्ण होने पर भी उसे अटकी हुई.... बहिर् को अपना मानता है, उसे अन्तर का अपना पूर्ण स्वरूप मानकर पूर्ण प्रगट करने की उसकी योग्यता है तो प्रगट करता है, इसलिए ऐसा कहा है। समझ में आया? पाठ ही यह है न, देखो न गाथा ४।

**बहिरन्तः परश्चेति त्रिधात्मा सर्वदेहिषु।**
**उपेयात्तत्र परमं मध्योपायाद्बहिस्त्यजेत्॥ ४॥**

इसका उपाय करके मध्य उपाय द्वारा परम प्रगट करना। एक को छोड़ना और एक को ग्रहण करना। अन्तरात्मा द्वारा। आहाहा! अलौकिक बात है। दिगम्बर सन्तों की बातें। आहाहा! समझ में आया? उसे पूर्ण पूर्णस्वरूप है, ऐसी प्रतीति कराते हैं। और पूर्णस्वरूप प्रगट न करे तो भी वह पूर्णस्वरूप से है, परमात्मास्वरूप ही है। आहाहा! समझ में आया?

उसे प्रगट करने के लिये उपाय भी यह। अन्तरात्मा-मध्य अन्तरात्मा वह उपाय है। कोई व्यवहार की क्रिया उपाय है, ऐसा वहाँ नहीं कहा। आहाहा! समझ में आया? इसी प्रकार सब आत्मा को ऐसा कहते हैं। भगवान! तू भले वर्तमान बहिरात्मा हो, परन्तु तेरा स्वभाव तो परमात्मा है और उस परमात्मा को प्रसिद्ध करके अनुभव करना, वह अन्तरात्मा है। अर्थात् कि अन्तर जो स्वभाव था, उसे पूर्ण अनुभव किया। आहाहा! और उस अन्तरात्मा द्वारा परमात्मा भी प्रगट होता है। यह इसका सिद्धान्त है।

अभव्य को भी परमात्मशक्ति है तो उसे तीनों आत्मा कहे। भले वर्तमान में बहिरात्मा है, पर्याय से। वस्तु से परमात्मा है। अन्तरात्मा भी स्वयं है। आहाहा! वह पर्याय में प्रगट करने की योग्यता नहीं रखता, इससे कहीं वस्तु का स्वरूप चला जाये?

ऐसा कहते हैं। समझ में आया? चन्दुभाई! यह बड़ी चर्चा हुई थी, ८५ में। मोहनलालजी ने... क्या कहलाता है? मोहनमाला। मोहनमाला नाम का ग्रन्थ रचा है। ग्रन्थ है। यहाँ हमको भेजा था। ८० के वर्ष में भेजा था वहाँ। राजकोट चातुर्मास था, तब बनाया था। हमें वहाँ भेजा था ८० में, राजकोट। उसमें यह लिखा हुआ है कि अभव्य को तीन आवरण होते हैं। मति, श्रुत और अवधि। इसलिए वह पढ़ा तो वहाँ मिले ८५ में वढवाण में। सुन्दर वोरा का उपाश्रय। मणिलालजी और सब थे।

मैंने कहा, यह तुम्हारी बात मिथ्या है। कहे, साहेब! अभव्य को हो ऐसा? सुनो! मणिलालजी थे न मणिलालजी, वे जरा ऐसे थे। कानजीस्वामी कहते हैं, वह सुनो। सामने मत बोलो। इन्होंने लिखा, इसलिए सिद्ध करो, ऐसा नहीं। यह कहे, वह सुनो। मणिलालजी थे न? मणिलालजी को ऐसा हो गया था। तुम कानजीमुनि का सुनो। ऐसा न मानो कि यह छोटे हैं और यह ५० वर्ष की तुम्हारी दीक्षा है। ये क्या कहते हैं? घडियाली! बोलते थे, नहीं? मोहनलालजी न, नहीं? सुन्दर वोरा के उपाश्रय में। मणिलालजी और मोहनलालजी थे। कहा, नहीं। आत्मा अभव्य को भी केवलज्ञान है। इसलिए उसे पाँच आवरण है। वह आवरण टाल नहीं सकता, इससे केवलज्ञान स्वभाव है—अकेला 'ज्ञ' स्वभाव है, अकेला ज्ञानस्वभाव, उसका कैसे निषेध किया जाये? समझ में आया? उनकी पुस्तक में प्रकाशित कर दिया था। मोहनलालजी ने। फिर ऐसी बात हुई मणिलालजी कहे, बात सत्य लगती है। बात तो सच्ची है। सब भगवान आत्मा सर्वज्ञस्वरूपी है।

सर्वज्ञ शक्ति, शक्ति का तत्त्व ही यह है। उसकी अस्ति ज्ञानस्वभाव से परिपूर्ण, वही उसकी अस्ति है। पर्याय में प्रगट हो, न हो, उसका प्रश्न यहाँ नहीं है। समझ में आया? आहाहा! वह यहाँ इसे विश्वास कराते हैं। किसे? वर्तमान में असर्वज्ञता होने पर भी और तू राग और अल्पज्ञपने को ही मानता होने पर भी, अल्पज्ञपना और राग, वह मैं, इतना मानना, वह तो बहिरात्मा है। क्योंकि वह ज्ञान की अवस्था बहिर् प्रगटी हुई है अंश, उसे मानना कि मैं हूँ पूरा, यह बहिरात्मा है। आहाहा! और अन्तर में सर्वज्ञ शक्ति पूरी पड़ी है। अकेला ज्ञानस्वभाव है, वह परिपूर्ण ही है। विपरीत नहीं, अपूर्ण

नहीं। ऐसा ही उसका स्वभाव अनन्त आत्माओं का है। भले अभव्य अनन्त काल में कभी मोक्ष नहीं जायेगा परन्तु उसका अपना स्वरूप तो सर्वज्ञ परमात्मा ही है। आहाहा! समझ में आया?

तब कहते हैं कि सर्वज्ञ को किस प्रकार कहोगे अब? तुमने यहाँ तो सिद्ध किया। **ऐसा कहना भी योग्य नहीं है क्योंकि भूतपूर्व....** मैं उनका बहिरात्मपना वर्तता था। उसे भूतनैगम अर्थात् भूतकाल की अपेक्षा से वर्तमान में कहने में आता है। इस प्रकार की शक्ति वर्तमान प्रगटी हुई है और प्रगट नहीं थी, तब ऐसी दशा थी, उसका अस्तित्व सिद्ध करते हैं। समझ में आया? यह सर्वज्ञ परमात्मा अरिहन्त हुए, उस काल में बहिरात्मपना भले नहीं। परन्तु पूर्व में था, वह सब पर्याय का पूरा पिण्ड होकर आत्मा है। समझ में आया? इसलिए उसकी सर्वज्ञशक्ति भले अभव्य को प्रगटी न हो और इन्हें प्रगट हुई है, तथापि इन्हें पूर्व का बहिरात्मपना भूतकाल के नय की अपेक्षा से लागू पड़ता है। यह दृष्टान्त दिया है न, देखो न!

**घृतघटवत् उस विरोध की असिद्धि है....** घी का घड़ा। अभी भले घी न हो परन्तु घी का घड़ा ऐसा कहने में आवे न भूतकाल की अपेक्षा से? **( उसमें विरोध नहीं आता )। जो सर्वज्ञ अवस्था में परमात्मा हुए,....** आहाहा! सर्वज्ञ अवस्था में परमात्मा हुए, ऐसा कहा न? अवस्था में-दशा में परमात्मा हुए। **वे भी पूर्व में बहिरात्मा तथा अन्तरात्मा थे।** समझ में आया? आहाहा! वे भी पूर्व में शक्तिरूप से परमात्मा थे परन्तु पर्याय में बहिरात्मा थे। आहाहा! वर्तमान में परमात्मदशा अवस्था से है। और पूर्व में बहिरात्मदशा अवस्था थी। वह भूतनैगमनय की अपेक्षा से वर्तमान में बहिरात्मा कहने में आता है। आहाहा! उसकी दृष्टि लम्बाकर तीन काल का तत्त्व इकट्ठा करते हैं। आहाहा! समझ में आया? और अन्तरात्मा भी थे पूर्व में। आहाहा! साधक अवस्था में अन्तरात्मा थे। तो वह पर्याय भूतकाल की अवस्था को वर्तमानवत् कहा जाता है।

राजा का कुँवर राज भ्रष्ट किया हो परन्तु भूतकाल की अपेक्षा से उसे राजा का कुँवर वर्तमान में कहा जाता है। राजकुमार है, राजकुँवर है, ऐसा कहा जाता है न? उसी प्रकार भगवान आत्मा पूर्व में बहिरात्मा था, उसे छोड़कर अन्तरात्मा को प्रगट कर

(वर्तमान में परमात्मा हुआ)। पूर्ण स्वरूप हूँ। ऐसी बात को अन्दर में उसे उतारे तो.... आहाहा! केवलज्ञान का उपाय हाथ आ जाये। आहाहा! आचार्यों-दिगम्बर सन्तों की गजब बातें, बापू! परम्परा अनादि का सनातन सर्वज्ञ जिनेश्वर का मार्ग, इस मार्ग में थे वे। समझ में आया? आहाहा! पोपटभाई! यह मार्ग वह बाहर से आया है हाथ। अब अन्तर उतारना, यह बात है। वापस बात ऐसी कही न? कि बहिरात्मपने के काल में उसका अन्तरात्मपना, परमात्मपना भी अन्दर है। आहाहा! अन्तरात्मा के काल में पूर्व के बहिरात्मा की अवस्था को पूर्व नय से वर्तमान में भी कहने में आता है। और परमात्म अवस्था अभी नहीं परन्तु शक्ति में है, इसलिए भविष्यनय से वह प्रगट होगी। यहाँ तो यह लेना है न? आहाहा!

**मुमुक्षु :** भावि प्रज्ञापन की अपेक्षा से?

**पूज्य गुरुदेवश्री :** हाँ, भाविनय की अपेक्षा से। वह भूत (नय) था। अरे! उसे विश्वास कैसे आवे? समझ में आया?

मैं स्वयं परमात्मा होने के योग्य हूँ, ऐसा नहीं। मैं परमात्मा वर्तमान में भाविनय की अपेक्षा से हूँ। आहाहा! श्रीमद् ने कहा है न कि केवलज्ञान श्रद्धारूप से प्रगट हुआ है। इच्छानय से वर्तमान वर्तता है। आहाहा! अमुक नय की अपेक्षा से, ऐसा कहा है निश्चयनय से-वर्तमान में मुख्यनय से है। आहाहा! बापू! उसके चैतन्य की सत्ता का सत्त्व, क्षेत्र शरीरप्रमाण होने पर भी, छोटी पीपर का कद छोटा होने पर भी और बाहर में रंग में काली होने पर भी उसकी शक्ति है, वह तो रुपया-रुपया (पूर्ण) वह तो अनन्त रजकण के स्कन्ध हैं। स्कन्ध हैं। उनकी भी शक्ति उसे अन्दर में चौसठ पहरी भरी हुई है। आहाहा! चौसठ पहरी अर्थात्? रुपया-पूर्ण। भरी हुई है, तो वह वर्तमान में काली और अल्प चरपराहट होने पर भी भावीनय की अपेक्षा से वर्तमान में चौसठ पहरी है, ऐसा भी कहा जाता है। और चौसठ पहरी जिसे प्रगट हो गयी है छोटी पीपर में से, उसे वर्तमान में भी अल्प पहरी है, वह भी भूतनय की अपेक्षा से कहने में आता है। आहाहा! यहाँ तो इसे भरोसे में चढ़ाते हैं। आहाहा! यह मूल चीज़ है।

**सर्वज्ञ अवस्था में परमात्मा हुए, वे भी पूर्व में बहिरात्मा तथा अन्तरात्मा थे।**

आहाहा! कौन विचार करे? **घृतघट की तरह भूत-भावी प्रज्ञापननय की अपेक्षा से....** देखो! नीचे है न? **भूतकाल की पर्याय को वर्तमानवत् कहे,....** आज भगवान मोक्ष पधारे, ऐसा कहते हैं या नहीं? दिवाली के दिन। यह २५०० वर्ष हुए भगवान को। दिवाली के दिन। कितना हिन्दुस्तान में... ओहोहो! महोत्सव.... महोत्सव.... महोत्सव। इस जाति का शुभभाव होता है। बाकी की क्रिया तो बाहर की होनेवाली हो तो होती है। परन्तु भगवान अभी जानते हैं, ऐसा लक्ष्य में रखकर यह सब होना चाहिए। समझ में आया? भगवान, देखो न! पद्मनन्दि आचार्य स्तुति करते हैं, वहाँ समवसरण में भगवान विराजते हैं, मोक्ष पधारे हैं भगवान महावीर, परन्तु इस समवसरण में यह बैठे-विराजे, उनकी स्तुति करते हैं। आहाहा! भूतकाल के नय को वर्तमान में लगा देते हैं। समझ में आया? आहाहा! यह भगवान। समवसरण में भगवान विराजते हैं। इन भगवान को चौसठ इन्द्र ऐसा करते हैं... ऐसा करते हैं। यह तो समवसरण था तब था। अभी सिद्ध में कहाँ है वह? चौबीस तीर्थंकर सिद्ध हो गये हैं। परन्तु भूतकाल के नय वर्तमान में लेकर यह भगवान समवसरण में विराजते हैं, इसकी उन्होंने प्रत्यक्षवत् स्तुति की। सिद्ध हो, तब परोक्ष स्तुति होती है। पण्डितजी! सिद्ध की परोक्ष स्तुति है और समवसरण में साक्षात् विराजते हों, तब उनकी प्रत्यक्ष स्तुति है। तो यहाँ महावीर अभी नहीं तो भी प्रत्यक्ष स्तुति है, ऐसा वे कहते हैं। समझ में आया? आहाहा! यह तो—भगवान तो ज्ञान का भण्डार है। इसे ज्ञान के सब पहलुओं से उसको जान लेना चाहिए। एक ही बात है। आहाहा! समझ में आया?

**घृतघट की तरह भूत-भावी....** ऐसा लिया न, देखो न! उसमें था न भूत और पूर्व। पहले में आया था।

**मुमुक्षु :** भूतपूर्व प्रज्ञापन नय।

**पूज्य गुरुदेवश्री :** हाँ। भूत अर्थात् गत (काल)—पूर्व।

**प्रज्ञापननय की अपेक्षा से....** घृतघट की भाँति। ऐसा यहाँ **घृतघट की तरह भूत-भावी प्रज्ञापननय की अपेक्षा से अन्तरात्मा को भी....** आहाहा! जो घी का घड़ा हुआ नहीं परन्तु होनेवाला है, उसे भी घी का घड़ा कहा जाता है। और घी निकल गया और

घी बिना का घड़ा रहा, उसे भी घी का घड़ा कहा जाता है। समझ में आया? राजा का कुँवर गद्दी पर बैठा नहीं तो भी राजकुमार कहा जाता है और वह कुँवर वहाँ से भ्रष्ट हो जाये तो भी उसे राजकुमार कहा जाता है। उसी प्रकार भगवान आत्मा में सर्वज्ञपर्याय प्रगट हुई, उस काल में भी पूर्व नय की अपेक्षा से उसे बहिरात्मा और अन्तरात्मा कहा जा सकता है। आहाहा! **घृतघट की तरह भूत-भावी प्रज्ञापननय की अपेक्षा से....** उन परमात्मा को कहा था। यह **अन्तरात्मा को भी बहिरात्मपना और परमात्मपना समझना।** लो! घृतघट की भाँति अन्तरात्मा को भी बहिरात्मपना उसे भूतकाल में था, भविष्य में उसे होगा। भूत-भविष्य में घट की भाँति। वर्तमान में स्वयं अन्तरात्मा होने पर भी। समझ में आया? (पहली) परमात्मा की बात की। यह अन्तरात्मा की। पूर्व का बहिरात्मपना अभी कहा जा सकता है, भविष्य में परमात्मा होगा, यह भी कहा जा सकता है। आहाहा! समझ में आया?

ऐसे आत्मा की अन्दर वस्तु की स्थिति की प्रतीति बिना सब जो क्रियाकाण्ड करे, उसे सम्यग्दर्शन बिना व्यर्थ है। आहाहा! ऐसा भरोसे में जिसने भगवान को चढ़ाया नहीं। भले कहते हैं कि वर्तमान में अन्तरात्मपना हो.... आहाहा! तथापि भूतकाल में बहिरात्मपने का वर्तमान में आरोप करके.... आहाहा! उसका अस्तित्व था, ऐसा वर्तमान में अस्तित्व सिद्ध करते हैं। बहिरात्मा का अस्तित्व पर्याय में था, उसे वर्तमान में भूतनय से अस्तित्व सिद्ध करते हैं। आहाहा! अन्तरात्मा अल्प काल में परमात्मा होनेवाले ही हैं। उसे भाविनय से वर्तमान में अन्तरात्मा को भी परमात्मा कहा जाता है। आहाहा! क्या बात.....

**मुमुक्षु :** धर्म में इसका क्या काम है? ऐसा कहा जाये और ऐसा कहा जाये।

**पूज्य गुरुदेवश्री :** धर्म करना हो तो उसे ऐसा काम होता है। धर्म एक निर्मल दशा है। तो वह निर्मल दशा प्रगट हुई नहीं, उससे पहले वह निर्मलपना अन्दर था या नहीं? समझ में आया? धर्म एक निर्मल दशा है। सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र की दशा, वह धर्म है। अब वह धर्म करनेवाले को वह दशा प्रगट हुई, तब उसके ख्याल में आया कि यह धर्मदशा की शक्ति मुझमें थी, वह प्रगट हुई है। समझ में आया? और यह

धर्मदशा प्रगटी है, वह अपूर्ण है। पर्याय में अपूर्ण है। और पूर्ण होनेवाली ही है। उसे वर्तमान में कह दे कि यह परमात्मा है। समझ में आया? उसे भरोसे आ गयी बात कि अन्तरात्मा हुआ, वह अल्प काल में मैं परमात्मा होनेवाला हूँ, वर्तमान में परमात्मा हूँ, ऐसा भावीनय की अपेक्षा से कहते हैं। आहाहा! समझ में आया? यह तो भाई! ज्ञान के... हैं सब। उसे समझ में सब लेने पड़ेंगे। यह बाहर की प्रवृत्ति क्रियाकाण्ड के कारण पूरा चैतन्यतत्त्व जो राग की क्रिया बिना का एक ओर पड़ा रहा और सब बात बाहर की लगायी धमाल की। समझ में आया?

**इन तीनों में से किसका, किस लिये ग्रहण करना या किसका त्याग करना?** पाठ में है न वह लेते हैं। **ग्रहण करना, अर्थात् उसमें उन तीन प्रकार के आत्माओं में से, परमात्मपने का स्वीकार ( ग्रहण ) करना।** पाठ है न मूल में, उसका (कहते हैं)। '**उपेयात्तत्र परमं**' उपाय परम का अन्तर (आत्मा), मध्य उपाय आत्मा, परम को प्रगट करने का मध्य उपाय आत्मा और तजने का बहिरात्मा। आहाहा! **ग्रहण करना, अर्थात् उसमें उन तीन प्रकार के आत्माओं में से, परमात्मपने का स्वीकार ( ग्रहण ) करना। किस प्रकार? मध्य उपाय से....** वापस ऐसा। परमात्मा प्रगट हुआ नहीं अभी, परन्तु परमात्मा का स्वीकार (करना कि) परम स्वरूप शुद्ध ज्ञानघन, ज्ञायकभाव परिपूर्ण स्वरूप, उसे मध्य उपाय से **अन्तरात्मा, वही उपाय है; उस द्वारा....** आहाहा! अन्तर में वस्तु जो है, अन्तर स्वरूप जो है, वह तो परमात्मस्वरूप है। उसे दृष्टि द्वारा स्वीकार करना, वह अन्तरात्मा है। आहाहा! समयसार की शैली से यह दूसरी शैली लगे, इसलिए मानो कि नयी है, ऐसा नहीं है। यह वस्तु की स्थिति है। समझ में आया?

**अन्तरात्मा, वही उपाय है;....** भगवान आत्मा परमात्मस्वरूप ही हूँ—ऐसा दृष्टि से और ज्ञान से स्वीकार किया, तब वह अन्तरात्मा हुआ। और उस अन्तरात्मा द्वारा.... आहाहा! **( परमात्मा का ग्रहण करना )....** अन्तरात्मा द्वारा परमात्मा होना। समझ में आया? **( परमात्मा का ग्रहण करना )....** ओहोहो! पूर्ण स्वरूप को अनुभव में लेकर उस उपाय द्वारा, मैं पूर्ण स्वरूप हूँ, उसके उपाय द्वारा प्रगट करने की शक्ति का कारण

अन्तरात्मा है। सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्रपना, वह अन्तरात्मा। पर्याय में। इस पर्याय द्वारा केवलज्ञान पाया जाता है। आहाहा!

कहा था न पहला? परम कैवल्य, ऐसा शब्द है न? कैवल्य अर्थात् केवलज्ञान अथवा अतीन्द्रिय सुख, उसका जो अभिलाषी है, उसके लिये यह कहा जाता है। ऐसा कहा। पहली गाथा में था न? कैवल्य। आहाहा! आत्मा की पूर्ण दशा कैवल्य। और उसका अतीन्द्रिय आनन्द स्वभाव, वह जिसे प्रगट करने की स्पृहा है, वह अतीन्द्रिय आनन्द और केवलज्ञान प्रगट करने की जिसकी स्पृहा है। आहाहा! वह श्रोता ऐसा होता है। उसे मैं यह बात कहूँगा। आहाहा! समझ में आया?

पाँच इन्द्रिय के विषय, बाहर प्रसिद्धि की अभिलाषा, यह पाँचों ही—शब्द, रूप, रस, गन्ध, स्पर्श, विषय.... आहाहा! इनकी जिसे अभिलाषा छूट गयी है और अतीन्द्रिय आनन्द की कैवल्य की जिसे अभिलाषा है। उसके लिये मेरा यह समाधितन्त्र है, (ऐसा) कहते हैं। समझ में आया? भले वह मिथ्यादृष्टि हो, श्रद्धा में अभी.... परन्तु उसकी जिज्ञासा में अतीन्द्रिय आनन्द की वृत्ति का भाव है। आहाहा! समझ में आया? ऐसा मार्ग! उसकी अपेक्षा पृथ्वीकाय की दया पालना.... ऐई! भोगीभाई! यह मिला है या नहीं तुमको वहाँ?

**मुमुक्षु :** .....

**पूज्य गुरुदेवश्री :** वह नहीं यह। परजीव की दया और उसमें वापस कहते हैं कि परजीव की दया में स्वजीव की दया रही है। और ऐसा कहते हैं। यह तो व्यवहार की अपेक्षा से बात है। परजीव की दया का विकल्प है, वह तो हिंसा है। आहाहा!

**मुमुक्षु :** वह तो अपनी.... दूसरा तो जीता है न।

**पूज्य गुरुदेवश्री :** धूल भी जीता नहीं। वह तो उसका आयुष्य हो तो जीवित रहता है। इसने जिलाने का भाव किया, इसलिए वहाँ जीता है, ऐसा नहीं है। उसके आयुष्य की स्थिति ही, उसके कारण से शरीर और आत्मा को रहने का था, वे रहे हैं। पर की दया पालने का भाव किया; इसलिए वहाँ जीये हैं, (ऐसा नहीं है)। आहाहा! परन्तु यह पूर्ण जीवन जो चैतन्य का है, परमात्मस्वरूप का जिसका टिकना जीव का

जीवन है, उसे जिसने माना नहीं और अल्पज्ञ और राग को ही अपना स्वभाव मानता है, उसने आत्मा का पूरा जीवन है, उसका उसने निषेध किया है। इसका नाम हिंसा है। आहाहा! जीव का अभाव किया न? पण्डितजी!

**मुमुक्षु :** ....

**पूज्य गुरुदेवश्री :** हिंसा भी इस कारण से। ऐसा। अपना महा स्वरूप है। परन्तु चैतन्य सर्वज्ञ शक्तिवाला तत्त्व है। सर्वज्ञ 'ज्ञ' स्वभावी अकेला 'ज्ञ' स्वभाव ही। तो 'ज्ञ' स्वभाव का अर्थ कि वह पूर्ण 'ज्ञ' स्वभाव है। ऐसा तत्त्व है। ऐसे तत्त्व का अनादर करके और अल्पज्ञ और राग को अपना स्वीकार करके आदर किया, उसने ही वास्तविक तत्त्व है पूरा जैसा, उसका उसमें जीवन का नाश किया है कि यह मैं नहीं, यह नहीं। आहाहा! चन्दुभाई! ऐसी बात है। आहाहा! और जिसे भगवान पूर्णानन्द का नाथ, जिसकी पर्याय में स्वीकार, सत्कार, आदर, उपादेयपना आया, उसने जीव को जैसा है, वैसा रखा।

**मुमुक्षु :** जीवित रखा।

**पूज्य गुरुदेवश्री :** जीवित रखा। आहाहा! समझ में आया? ऐसा स्वरूप है। लोगों को भारी कठिन पड़े, हों! व्यवहार के रसिया हो न। उन्हें (ऐसा लगता है) परन्तु यह क्या कहते हैं?

**मुमुक्षु :** .....

**पूज्य गुरुदेवश्री :** .....परमात्मा स्वयं ही व्यवहार है। पर्याय अर्थात् व्यवहार है, द्रव्य अर्थात् निश्चय है। आहाहा!

**( परमात्मा का ग्रहण करना ) तथा मध्य ( अन्तरात्मारूप ) उपाय से ही,....** अर्थात् कि अन्तरात्मा, वही उपाय है। आहाहा! पर्याय में सम्यग्दर्शन-ज्ञान हुआ, वह अन्तरात्मपना। वस्तु तो परमात्मा अन्दर है परन्तु उसका स्वीकार हुआ, तब वह अन्तरात्मा हुआ, पर्याय में। वस्तु में परमात्मा है। और उसके द्वारा उसने परमात्मपद को प्राप्त किया। आहाहा! यह बीच में व्यवहार से होता है और अमुक होता है, यह सब यहाँ उड़ा दिया।

**मुमुक्षु :** यह तो सोनगढ़ से प्रकाशित होगा....

**पूज्य गुरुदेवश्री :** सोनगढ़ से प्रकाशित यह द्रव्यसंग्रह—इन सबमें नहीं? समयसार में। प्रकाशित चाहे जिसका हो। शब्द किसके हैं? आहाहा!

**मध्य उपाय से ही,...** अन्तरात्मा द्वारा परमात्मा को साधना। आहाहा! और **बहिरात्मपने का त्याग करना।** यह राग और व्यवहाररत्नत्रय के विकल्प और अल्पज्ञ, वह मैं—ऐसी जो मान्यता थी, वह छूट गयी। आहाहा! और सर्वज्ञ और परिपूर्ण विकाररहित और पूर्ण स्वभाववाला, उसके स्वीकार की अनुभवदृष्टि द्वारा उसने अन्तरात्मा अर्थात् मध्य आत्मा उस द्वारा परमात्मा का साधन करना। परमात्मा को प्रगट करना। यह बात है। समझ में आया? ऐसा उपदेश! सोनगढ़ को पादर यहाँ भैंसे बैठते थे, वहाँ यह बात आयी। इस जमीन में ..... यहाँ खेत था न, यह खेत था। कहाँ इस चीज़ को जिस क्षेत्र में और जिस काल में.... आहाहा!

**भावार्थ :- सर्व जीवों में बहिरात्मा, अन्तरात्मा और परमात्मा—ऐसी तीन प्रकार की अवस्थाएँ होती हैं।** तीन अवस्था की बात है न!

**मुमुक्षु :** ....

**पूज्य गुरुदेवश्री :** उसकी अवस्था के तीन प्रकार हैं।

**उनमें बहिरात्म अवस्था छोड़नेयोग्य है;....** राग और अल्पज्ञपना उतना मैं, वह दृष्टि छोड़नेयोग्य है। आहाहा! पर्यायबुद्धि छोड़नेयोग्य है, इसका अर्थ यह है। एक अंशरूप से जो प्रगट क्षयोपशम का अंश है, वहाँ इसकी जो रुचि जमी है, वह बहिरात्मा है। उस प्रगट अंश जितना मैं, (ऐसा माना) तो पूरा अन्तर स्वभाव है, उसे इसने छोड़ दिया। यह वस्तु! आहाहा! **उनमें बहिरात्म अवस्था छोड़नेयोग्य है; अन्तरात्म अवस्था, परमात्मपद की प्राप्ति का साधन है;....** सादी भाषा में वापस कहा। पूर्ण सिद्धपद और केवलज्ञान की पदवी-दशा, उसे प्राप्ति का साधन—पूर्णानन्दस्वरूप हूँ, पर्याय में पूर्ण भले प्रगट नहीं हुआ, परन्तु पर्याय ने स्वीकार पूर्णता का किया। आहाहा! अल्पज्ञ पर्याय ने पूर्णता का स्वीकार किया, अर्थात् पर्याय इस ओर ढली। आहाहा! नहीं तो वह पर्याय भी व्यवहार है। परन्तु वह व्यवहार ढला द्रव्य की ओर। आहाहा! समझ में आया?

**अन्तरात्म अवस्था, परमात्मपद की प्राप्ति का साधन है; अतः वह प्रगट करने योग्य है....** ऐसा। परमात्मपद। **और परमात्म अवस्था जो आत्मा की स्वाभाविक परम वीतरागी अवस्था है, वह साध्य है; अतः वह परम उपादेय ( प्रगट करने योग्य ) है।** स्वीकार करनेयोग्य है, ग्रहण करनेयोग्य है। आहाहा!

**मुमुक्षु :** सात तत्त्व तो समयसार.....

**पूज्य गुरुदेवश्री :** हाँ, उससे यह सब है। समयसार से बारम्बार पढ़ा हुआ इसलिए उसे.... वस्तु की स्थिति यह है। यह तो संक्षिप्त कही है। यह भी समयसार है। और वह भी भगवान के पास गये थे। हाँ, पूज्यपादस्वामी परमात्मा के पास गये थे। वहाँ से आकर लिखा है। आहाहा!

**मुमुक्षु :** उमास्वामी भी गये थे ऐसा....

**पूज्य गुरुदेवश्री :** हाँ। यह भी आता है। ये तो गये थे, खास आता है। आहाहा!

**अतः वह परम उपादेय ( प्रगट करने योग्य ) है।** ऐसा कि इसकी अपेक्षा समयसार सरल है, ऐसा नहीं। समयसार की पद्धति में यह है। समझ में आया? परसमय और स्वसमय कहा, लो। दूसरी ही गाथा में। '**जीवो चरित्तदंसणणाणठिदो**' भगवान आत्मा परमात्मस्वरूप विराजमान, वह स्वयं अपने सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र में आया। ऐसा वहाँ कहा। यह आत्मा ऐसा स्थिर हुआ, ऐसा कहा। पर्याय वहाँ स्थिर हुई, ऐसा नहीं। वह अवस्था से बताया है। भगवान आत्मा पूर्ण ज्ञान, दर्शन, आनन्दस्वरूप वह स्वयं सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र जो स्वसमय है, उसमें है। देखो! यह क्या कहा? परमात्मस्वरूप को स्वीकार कर जो दशा प्रगट हुई, वह अन्तरात्मा है। और '**पोग्गलकम्मपदेसट्ठिदं च तं जाण परसमयं**' लो, वहाँ बहिरात्मा हुआ। स्वसमय में अन्तरात्मा, उसके साध्य में-ध्येय में परमात्मा और छोड़नेयोग्य की चीज़ में बहिरात्मा। आ गया।

**मुमुक्षु :** ऐसा आपने किसी समय अर्थ किया नहीं।

**पूज्य गुरुदेवश्री :** ऐसा न भी किया हो। अभी करते हैं। उसके साथ मिलाना है न! इसका अर्थ ही यह हुआ है। आहाहा!

जो कोई राग के विकल्प में स्थिर होगा, रहेगा, वह पुद्गलकर्म में रहा है, वह

जीव में नहीं आया। आहाहा! उसे बहिरात्मा कहा। और जो कोई प्रभु आत्मा सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र में आयेगा, स्थिर होगा। पर्याय स्थिर होगी ऐसा नहीं, यह तो सब एक का एक ही है। पर्याय यहाँ झुकी अर्थात् ही आत्मा अब उसमें आया। आहाहा! समझ में आया? यह दूसरी गाथा से शुरुआत हुई। आहाहा!

अरे! धर्म वस्तु कैसी कि जो अनादि काल के दुःख का अन्त (लावे) और आनन्द की शुरुआत (हो)। कहाँ तक? अनन्त काल आनन्द.... आहाहा! समझ में आया? चैतन्यस्वरूप आनन्द। कहा था न तीन? तीन भाई हों न ये? बड़ा चेतन है, वह स्वरूप है और तीसरा आनेवाला है, आनन्द। शशीभाई खारा के तीन (लड़के) हैं। आहाहा! छोटा लड़का है न.... खारा का पुत्र था। चाहे जहाँ जन्मना, पूर्वभव का कुछ है अवश्य। ऐसे दिशा को गये थे तब लकड़ी थी बड़ी, खड... खड। ऐसा किया। नहीं? तू था या नहीं? भाई भी साथ में थे, नहीं? कहा, इसके कुछ पूर्व के संस्कार हैं कोई.... कि चाहे जिसके। ....ऐसे किया। बड़ा खड था न.... क्या कहलाता है वह? यह नहीं था? उसे नाम देते हैं। लम्बे पतले। पानी-पानी? पानी कहते हैं? वह.... पड़ा था बड़ा। लेकर ऐसे (किया)। क्या यह? इतनी उम्र में? ऐसा बहुत बार किया था, नहीं? यह कुछ पूर्व का है। आहाहा!

यहाँ तो कहते हैं कि टाँक पर्याय को द्रव्य पर। मार। आहाहा! जिससे बहिरात्मपना नाश हो और अन्तरात्मपना प्रगट हो। उस अन्तरात्मा द्वारा केवलज्ञान का साधन हो। आहाहा! यह बात है। शब्दकोश में भाई जरा आया है। रात्रि में कल पढ़ता था। ऐसा नहीं डालना चाहिए। ऐसा कि यह सब वर्तमान जो कहते हैं, यह बात इन्द्रिय प्रत्यक्ष हो गयी है। इसलिए इसका विश्वास कैसे छोड़ना? शास्त्र में लिखा है न, ऐसा लिखा है। ऐसा उसे नहीं लिखना चाहिए। शास्त्र में जो यह द्वीप और समुद्र सब कहे हैं और अमुक कहा है। वह पृथ्वी के कहे हैं, परन्तु इस आकाश का कोई आकार लगता है। यह लोग.... बातें करते हैं। अरे! यह साधारण लोग करते हैं और भगवान मुनि कहते हैं, उसे मिलाना न आवे, इससे.... ऐसा भाई सब लिखा है। बहुत कठोर। हुकमचन्द ने गुणगान कैसे किये? आहाहा! सन्त कुन्दकुन्दाचार्य, पूज्यपादस्वामी.... साक्षात् भगवान विराजते हैं। महाविदेह कहाँ है अभी भूगोल की अपेक्षा से? लो!

**मुमुक्षु :** उसे जानने के लिये है।

**पूज्य गुरुदेवश्री :** जानने के लिये है तो महाविदेह में कुन्दकुन्दाचार्य गये थे।

**मुमुक्षु :** यहाँ जब सूर्य अस्त हो, तब वहाँ उगता है। अभी अमेरिका में....

**पूज्य गुरुदेवश्री :** सब गप्प। आहाहा! समझ में आया?

**परमात्म अवस्था जो आत्मा की स्वाभाविक परम वीतरागी अवस्था है, वह साध्य है; अतः वह परम उपादेय ( प्रगट करने योग्य ) है।** ग्रहण करनेयोग्य कहा न?

**प्रश्न - सर्व प्राणियों में आत्मा की तीन अवस्थाएँ हैं—ऐसा श्लोक में कहा है, किन्तु अभव्य को तो एक बहिरात्म अवस्था ही सम्भव है, तो सर्व प्राणियों के आत्मा की तीन अवस्थाएँ कैसे सम्भव हैं?**

**उत्तर - जो जीव, अज्ञानी बहिरात्मा है, उसमें भी अन्तरात्मा और परमात्मा होने की शक्ति है।** आहाहा! उसे अन्तर में पूर्णानन्द का नाथ है, उसका विश्वास कराते हैं। आहाहा! भाई! तू ऐसा न मान। बहिरात्म अवस्थावाले को इतनी अवस्थावाला ही है, ऐसा न मान। आहाहा! सर्व जीव है ज्ञानमय.... नहीं आता उसमें? योगसार में। 'जाने समता धार।' योगसार में आता है। यह ज्ञानमय है। यह वर्तमान बहिरात्मा होने पर भी उसकी शक्ति अन्तरात्मा और परमात्मा की है। आहाहा! होने की (शक्ति) है।

**भव्य और अभव्यजीवों में भी केवलज्ञानादिरूप परमात्मशक्ति है।** लो! पहले वह आवरण कहा था। अब शक्ति कही। **अभव्यजीवों में भी केवलज्ञानादिरूप परमात्मशक्ति है। यदि उनमें वह शक्ति न हो तो उसके प्रगट न होने में निमित्तरूप केवलज्ञानावरणादि कर्म भी नहीं होना चाहिए,...** बहुत दलील दी है। समझ में आया? यही दलील की बात तब हुई थी। (संवत्) १९८५। बहुत हुई थी। मानी थे थोड़ा। कान वह थे जरा। यह बुचा जैसा। सुनो। कानजीमुनि क्या कहते हैं? वे कहते हैं कि उसे ज्ञानावरणीय है। केवलज्ञानावरणीय अभव्य को है, इसलिए केवलज्ञान होवे तो निमित्तरूप से केवलज्ञानावरणीय हो, ऐसा कहते हैं। आहाहा! समझ में आया? देखो! यह है न? तब बात हुई होगी। आया होगा। उसने लिखा है, तुम्हारे पास मैंने सुना था। शीतलप्रसाद का सुना होगा। तब कहाँ था यह? प्रभाचन्द्र का आया है।....जुगलकिशोर

ने किया था न? दूसरा है न। हिन्दी दो है। एक शीतलप्रसाद का और एक यह प्रभाचन्द्र की टीका का। जुगलकिशोर का है न? मुखत्यार। दिल्लीवाले?

यहाँ कहते हैं, यदि केवलज्ञान की शक्ति मानने में न आवे तो निमित्तरूप केवलज्ञानावरणी कर्म नहीं होना चाहिए। न्याय समझ में आता है कुछ इसमें? है यह? क्या नाम लिखा है? शीतलप्रसाद का है? यह प्रभाचन्द्र की टीका का अर्थ है। शीतलप्रसाद ने स्वयं ऊपर से लिया है। उसमें बहुत फेरफार है।

**किन्तु बहिरात्मा को (अभव्य को भी) केवलज्ञानावरणादि कर्म तो है;...** वाह! **इससे स्पष्ट है कि बहिरात्मा में (भव्य या अभव्य में) केवलज्ञानादि शक्तिपने हैं। अभव्य के उस शक्ति को प्रगट करने जितनी योग्यता नहीं है।** योग्यता नहीं अर्थात् क्या (शक्ति) चली गयी? समझ में आया? इसलिए अभव्य को भी बहिरात्मा, अन्तरात्मा और परमात्मा तीन लागू पड़ते हैं। विशेष कहेंगे.....

(**श्रोता :** प्रमाण वचन गुरुदेव!)